IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आर.के. मोहन इंस्ट्रुमेन्ट्स मेकर

डॉ. गौरव शर्मा

प्रवक्ता संगीत हिमाचल प्रदेश

दिल्ली शहर में वाद्य निर्माण के क्षेत्र में आर.के. मोहन ने विशेष स्थान बनाया हुआ है। इनकी दुकान की शुरूआत सन् 1940 में हुई। दुकान दिल्ली शहर के कश्मीरी गेट के पास हिल्टन रोड पर स्थित है। आर. के. मोहन में 'R' से रंजीत सिंह 'K' से किशन सिंह और 'M' से सबसे छोटे भाई मोहन हैं। मोहन दोनों भाइयों के लाडले थे इसलिए उनका नाम पूरा रखा गया। इसे सर्वप्रथम रंजीत सिंह ने शुरू किया। जो ब्रिटिश काल में अंग्रेजों के लिए Marco Sant Company में काम किया करते थे। उस समय ज़मीदार रईस लोग आर्केस्ट्रा, मोजार्ट व विथोवन की सिम्फनीज़ सुनना पसन्द किया करते थे और उस समय मुख्य रूप से Piano, डबल बेस चेलो वाद्यों का काम ही अधिक किया जाता था। रंजीत सिंह उन वाद्यों को बनाने तथा मरम्मत का काम किया करते थे।

वाद्य निर्माण का यह कार्य रंजीत सिंह ने शुरू किया था पर उन्होंने अपने छोटे भाई किशन सिंह को भी इस कार्य में शामिल कर लिया। देखते ही देखते दोनों भाई अच्छे वाद्यों का निर्माण करने लगे। वहीं तीसरे भाई मोहन भी 14 वर्ष की आयु में ही काम की तलाश में इधर–उधर भटक रहे थे। दोनों बड़े भाई रंजीत सिंह और किशन सिंह ने छोटे भाई मोहन को भी वाद्य निर्माण के कार्य में सम्मिलित कर लिया। उस समय भारतीय वाद्यों का प्रचार प्रसार दिल्ली में शुरू हो रहा था। सन् 1942 में आर.के. मोहन के नाम से इस दुकान का ब्रिटिश पेटेंट

किया गया। इनके पिता का नाम गंगा राम बिलखु था जब अकाली लहर चली तो वे गंगा सिंह विलखु हो गए। उस समय उन्होंने हिन्दु धर्म से सिख धर्म अपना लिया। वैसे तो इनको पिता धीमान थे। धीमान वो होते हैं जो बढ़ई का काम करते है। इनके पिताजी गीत पढ़ते थे। पहले इनकी सोच सनातनी थी। इसलिए इनके सारे धार्मिक अनुष्ठान आज भी हिन्दु रीति–रिवाज़ों से किये जाते हैं। गोत्र, विवाह इत्यादि भी सभी हिन्दु रीति–रिवाज़ों के अनुसार किये जाते हैं। गंगा राम विलखु पंजाब में काला सिंधिया के रहने वाले हैं। यह गांव जालंधर और कपोसीनि के बीच में स्थित है। 1900 के समय ये गांव नैकस्लाईट का गांव हुआ करता था। यहाँ के लोगों की सोच ब्रिटिश समय में माऊवादी विचार धारा की हुआ करती थी। लाहौर के ज़मींदार यहाँ की महिलाओं को उठाकर ले जाते थे और उन्हें मारते–पीटते भी थे परन्तु इस गांव के लोग रात के अंधेरे में जाकर उन्हें छुड़ा लाते थे। यह भी एक बड़ा कारण था कि इस गांव को नैक्स्लाईट गांव भी कहा जाता था। इनके पिता जो बैलगाड़ियों की मरम्मत का काम भी किया करते थे। बाद में वह दिल्ली आ गए।

रंजीत सिंह सन् 1945 में कुछ समय के लिए भारत छोड़ कर सबसे पहले अपने ससुराल वालों के साथ अफ्रीका के मिमांसा चले गए। वहाँ पर 40 से 50 भारतीय लोगों का समूह जाया करता था और वे सभी लोग जंगल में लकड़ी काटने का काम किया करते थे। वहाँ भारतीय लोगों को बन्धुआ मजदूरों की तरह रख जाता था। उन्हें समय पर खाना–पीना भी नहीं दिया जाता था। किसी के विद्रोह करने पर उसे हन्टरों से मारा जाता था। रंजीत सिंह वहां से 8 महीने बाद भारत वापस आ गए थे।

सन् 1946 में तीनों भाइयों ने दुकान को आज के पाकिस्तान में ले जाने के बारे में सोचा और दिसम्बर महीने तक दुकान पाकिस्तान के अनारकली बाज़ार में शिफ्ट कर दो गई। पाकिस्तान का अनारकली बाज़ार उस समय देश के कलाकारों, संगीतज्ञों तथा वाद्य निर्माताओं

का केन्द्र हुआ करता था और यही एक मुख्य कारण बना दुकान को उस स्थान पर ले जाने का। दुकान का सारा सामान धीरे–धीरे दिल्ली से पाकिस्तान लाया जा ही रहा था कि 1947 में देश अंग्रेजों की गुलामी से आज़ाद हुआ और साथ ही हिन्दुस्तान पाकिस्तान का विभाजन भी हो गया। विभाजन होते ही देश में दंगे होने लगे। तीनों भाई दिल्ली तो वापस आ गए परन्तु दुकान का सारा सामान वहीं पाकिस्तान में रह गया। दिल्ली में स्थित उनकी दुकान अभी भी उन्हीं की थी पर दुकान का अधिकतर सामान पाकिस्तान भिजवाया जा चुका था इस कारण दुकान का काम दो साल के लिए बन्द करना पड़ा। उस समय मिलिट्री के जरनल करियप्पा थे। करियप्पा ने तीनों भाईयों को उनके साथ उन्होंने काम करने की अनुमति दी तथा तीनों रंजीत, किशन व मोहन ने वहां वैस्टर्न कमान्डर का भी काम किया। वहां पर तीनों भाईयों ने पैटी कॉन्ट्रैक्टर का भी काम किया। पैटी कान्ट्रैक्टर वे होते थे जो आर्मी के साथ रह कर उनका सामान पैक किया करते थे। दिल्ली में record पैक होता और शिमला चला जाता। किशन सिंह शिमला में record खोलते और मोहन सिंह दिल्ली में पैक किया करते थे। इस तरह उन्होंने कुछ पैसे इकट्ठा किये तथा धीरे–धीरे फिर से अपने वाद्य–निर्माण के कार्य में आ गए।

आज़ादी के बाद दिल्ली आने पर उन्हें दो दुकानें सरकार से अलॉट हुई। यह दुकान उन्हें रिफ्यूज़ी समझ कर मिली थीं इसलिए तीनों भाइयों ने आपसी सलाह से दुकान सरकार को वापस देने का निर्णय लिया क्योंकि यह रिफ्यूजियों का हक था।

सन् 1947 के बाद दिल्ली में नकल डस्टर और छूरे बाजी शुरू हो गई थी। रजीत सिंह नरम दल के व्यक्ति थे, जिस कारण उन्हें वह माहौल पसन्द नहीं आया और वे भारत छोड़कर लंदन चले गए। निश्चित रूप से वे लकड़ी का काम अच्छे से जानते थे इसीलिए लंदन जाकर उन्होंने अपना लकड़ी का काम किया। उन्होंने लकड़ी के खिड़की, दरवाज़े बनाने का कार्य किया। कुछ समय बाद उन्होंने लंदन के साऊथ हॉल में एक गुरुद्वारे की स्थापना की जिसका

नाम रामगड़िया गुरूद्वारा रखा गया। रंजीत सिंह रामगड़िया गुरुद्वारे के फाउंडर हैं अतः उनकी तस्वीर आज भी गुरुद्वारे में लगी हुई है। इस गुरुद्वारे को रामगड़िया भवन भी कहते हैं।

रंजीत सिंह अपना उपनाम दिवाना लिखा करते थे। उस समय तीन शायर हुए–दिवाना, परवाना और मस्ताना। उस समय उनकी दोस्ती सिंधी लोगों के साथ ज़्यादा थी तथा वे बैंजो के साथ शौकिया तौर पर कीर्तन किया करते थे। बैंजो एक जापानी वाद्य था जिसे ताशाकोटा कहा जाता था। पहले इस वाद्य को बजाने के लिए टाईपराईटर के बटन (Key) इस्तेमाल किये जाते थे। रंजीत सिंह ने उसे परिवर्तित कर हारमोनियम की तरह बना दिया तथा उसको अपने छोटे भाई मोहन का नाम दिया–मोहीनी बैंजो इस वाद्य को आज भी मोहीनी बैंजो या बुलबुल तरंग के नाम से जाना जाता है।

रंजीत सिंह आज़ादी के बाद लंदन चले गए और वहीं पर उनकी वंश परम्परा आगे बढ़ी। परन्तु उन्होंने वहाँ जाकर वाद्य निर्माण का कार्य नहीं किया। उनके दूसरे भाई किशन सिंह बाह्य निर्माण का कार्य करते रहे किन्तु किशन सिंह के बच्चों ने यह कार्य नहीं किया। सबसे छोटे भाई मोहन सिंह ने भी आगे निर्माण का कार्य जारी रखा। मोहन सिंह ने (DCM) Delhi Collage of Music में दो वर्ष काम भी किया। यहाँ पर वे ट्यूनर ऑपरेटर का काम किया करते थे। जब मोहन सिंह दिल्ली में पैटी कॉन्ट्रैक्टर का काम किया करते थे उसी दौरान उन्होंने DCM में लकड़ी का काम भी सीखा। वहाँ बड़ी–बड़ी आरीयों से लकड़ी चीरी जाती और उस की विशेषता ये होती है कि वह लकड़ी कभी टेढ़ी नहीं होती तथा उसे ठण्डी चीराई भी कहते हैं।

मोहन सिंह के दो पुत्र सरबजीत सिंह और दलबीर सिंह हैं जिसमें सरबजीत सिंह आज भी आर.के. मोहन कश्मीरी गेट, दिल्ली में स्थित दुकान में अपना वाद्य निर्माण का कार्य कर रहे

हैं। दूसरे पुत्र अपने घर से ही वाद्य निर्माण का कार्य कर रहे हैं। सरबजीत सिंह का जन्म दिल्ली में सन् 1958 में हुआ। इन्होंने सिविल लाइन्स में यूनाइटिड क्रिश्चिन स्कूल से ग्यारहवीं कक्षा तक पढ़ाई की तथा उनका ड्राफ्ट मैन बनने का विचार था। परन्तु पिताजी ने उन्हें मशीन कम्पोनेंट का कोर्स करने की सलाह दी। पिताजी ने DCM में दो वर्षों तक तो काम किया ही था अतः उन्हें इस काम का अच्छा खासा अनुभव भी था। सरबजीत सिंह ने स्वयं मशीन कॉम्पोनेन्ट का कोर्स किया जिसमें उन्होंने लगभग 16 प्रकार की मशीनों को चलाना सीखा।

सरबजीत के ननिहाल में लौहार का काम किया जाता था और दादा बैलगाड़ियों की मरम्मत तथा साथ ही बढ़ई का काम भी किया करते थे। सरबजीत की अपने पुश्तैनी काम को सीखने का मौका मिला। पंजाबी में पुश्तैनी काम को सीखने के लिए मिरासी शब्द का इस्तेमाल होता है।

सन् 1976 में इन्होंने वाद्य निर्माण का कार्य करना प्रारम्भ किया। उस समय इनके पिताजी लगभग सभी भारतीय वाद्यों को बनाना जानते थे। उस समय सितार, तानपुरा, रुद्रवीणा, सुरबहार, रबाब, दिलरूबा इत्यादि वाद्य बनाए जाते थे। जो कि आज भी ये कार्य दिल्ली के कश्मीरी गेट में R.K. Mohan के नाम से दुकान से कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारतीय संगीत वाद्य; डॉ. लालमणि मिश्र ज्ञानपीठ प्रकाशन 2002

2. सुर तार; डॉ. सुनीरा कासलीवाल' कनिष्का पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स 2002

3. Classical Musical Instruments; Dr. Suneera Kasliwal; Rupa & Co.

4. भारतीय संगीत शास्त्रों में वाद्यों का चिन्तन; डॉ. अंजना भार्गव; कनिष्का पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स; नई दिल्ली

5. हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के तंत्री वाद्यों में परिवर्तन एवं प्रवृत्तियाँ; डॉ. योगिता शर्मा; कनिष्का पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स; नई दिल्ली